मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि हमारे प्रदेश के निर्वाचन आयोग के 23वें स्थापना दिवस समारोह के उद्घाटन के लिये मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया है। मुझे आशा है कि पारस्परिक सद्भाव के शहर भोपाल में आयोजित दो दिवसीय समारोह विचार विनिमय के लिए आप सभी को अच्छा वातावरण प्रदान करेगा।

अपने पुराने संकल्प के अनुरूप ही स्वतंत्रता के बाद भारत ने लोकतंत्र को अपनाया। हमने लोकतंत्र को एक शासन पद्धति मानकर नहीं, बल्कि एक जीवन–मूल्य मानकर अपनाया है। लोकतंत्रीय व्यवस्था में जनभावनाएं मतपत्र के माध्यम से अभिव्यक्त होती हैं। निर्वाचन के दौर में सभी प्रत्याशी अपनी विजय के लिए जी–तोड़ मेहनत करते हैं। वे किसी भी दल के हो सकते हैं, निर्दलीय भी हो सकते हैं। चुनावों को सफल बनाने के लिए राज्य निर्वाचन आयुक्त से लेकर जिलों के मैदानी अमले तक सभी इस लोकतांत्रिक अनुष्ठान में शामिल होते हैं। जिसके लिए यह सभी साधुवाद के पात्र हैं।

संसद एवं विधान सभाओं के नीचे स्थानीय निकायों को गवर्नेंस के तीसरे टियर के रूप में देखा जाता है। संवैधानिक गारंटियों से इन्हें सशक्त बनाने के लिये उठाये कदमों को दो दशक से अधिक समय बीत चुका है। लीक से हटकर संसद ने 1993 में संविधान के तेहत्तरवें एवं चोहत्तरवें संशोधनों को पारित कर इतिहास रचा। लेकिन यह समझना भूल होगी कि पंचायतीराज की अवधारणा कोई नई चीज है। ऐसी जनतांत्रिक व्यवस्थाओं का उल्लेख किसी न किसी रूप में वैदिक काल से मिलता आ रहा है। ऋग्वेद में गाँव के मुखिया को ''ग्रामीण'' कहा गया है। गुप्त काल में भी ऐसी व्यवस्था थी। बौद्ध साहित्य में उल्लेख मिलता है कि गौतम बुद्ध ने आनन्द से कहा कि जब तक गाँव के पांच लोग मिलकर हित–अहित पर विचार करते रहेंगे, तब तक कोई बाल बांका नहीं कर सकेगा। ग्राम पंचायत तथा नगर पंचायत के बारे में उत्तर भारत में पूर्व मध्यकाल के पाल–प्रतिहारों के शिलालेखों में बड़ी रोचक जानकारी मिलती है। तमिल प्रदेश में चोल वंश के राजाओं के शिलालेखों में पंचायतों की चुनाव–प्रक्रिया बताई गई है। ग्राम पंचायतों की अर्थव्यवस्था का भी उल्लेख मिलता है।

नगरीय क्षेत्रों के लिए भी पंचायत प्रणाली का उल्लेख किया गया है। इसके लिए ''उत्तर सभा'', ''गोष्ठी'', ''पंचकुल'' तथा ''सौवायिक'' जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है। कर्नाटक, तमिलनाडु एवं महाराष्ट्र वाले क्षेत्रों से 30 सदस्यों की समिति के चुनने की व्यवस्था का उल्लेख है। अनेक राज्यों में आज से लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व 1867 के आस–पास निर्वाचित नगर निकायों की

स्थापना होने लगी थी। यह बात अलग है कि विभिन्न कारणों से ये संस्थाएँ स्थानीय स्वायत्त शासन के प्रभावी घटक के रूप में नहीं उभर पाईं।

इसी तरह ग्राम स्तरीय पंचायतें शताब्दियों से आपसी विवादों को निपटाने तथा ग्रामीणों को संगठित करने का माध्यम रहीं हैं। लेकिन आजादी के पूर्व उन्हें सम्यक रूप से कोई वैद्यानिक मान्यता नहीं मिली। ग्रामीणों की संगठन–शक्ति तथा उसके प्रभाव को गाँधी जी ने सन् 1917 में 'चम्पारन सत्याग्रह' के दौरान पहचाना, जहां वे नील की खेती करने वाले किसानों को सरकारी शोषण से मुक्ति दिलाने गये थे। स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व करते हुए उन्होंने इस बात पर बराबर बल दिया कि स्वराज्य का विस्तार ग्राम स्वराज्य तक तथा स्व–शासन का विस्तार पंचायतराज तक होना चाहिए।

देश के अन्य राज्यों के समान मध्यप्रदेश में भी नगरीय निकायों का इतिहास बहुत पुराना है। प्रदेश के उस भाग में जिसे महाकौशल के नाम से जाना जाता है, नगरपालिकाओं की स्थापना सन् 1869 में हुई थी। तब चौदह नगरों में नगरपालिकाएँ गठित की गई थीं। उसके एक दशक के अंदर पूर्व मध्यभारत क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली रियासतों जैसे कि इन्दौर एवं ग्वालियर में भी नगरपालिकाएं गठित हुईं। पुराने विन्ध्य प्रदेश तथा भोपाल रियासत में नगरपालिकाएं 20वीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में अस्तित्व में आईं। बंदेलखण्ड में सर्व प्रथम वर्ष 1907 में दतिया में नगरपालिका स्थापित हुई जब कि पुरानी भोपाल रियासत में वर्ष 1903 में बनाई गई ''जमाते इंतजामी'' का स्थान वर्ष 1916 में मुनसिपालिटी एक्ट के तहत गठित नगरपालिका ने लिया।

इतिहास इतना पुराना होने के बावजूद नगरपालिकाऐं सही मायने में स्थानीय स्वायत्त शासन की प्रभावी इकाई के रूप में नहीं उभर पाईं। प्रारम्भ से ही नगरपालिकाएं अपने दायित्वों और वित्तीय संसाधनों के लिए राज्य सरकारों की मुखापेक्षी रहीं। सामान्यतः राज्य सरकारों ने, उन्हें स्थानीय शासन की स्वायत्त संस्थाओं के रूप में विकसित करने में न केवल सीमित रूचि प्रदर्शित की, वरन् उन्हें हमेशा ही सत्ता की भागीदारी के एक प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखा। आश्चर्य नहीं कि इन संस्थाओं के नियमित चुनावों की ओर ध्यान नहीं दिया गया और इन्हें वर्षों तक अधिक्रमित रखे जाने की परिपाटी प्रचलित रही।

पंचायतों का हाल भी कुछ ऐसा ही रहा। बापू ने उनके महत्व को पहचाना। उन्होंने भारत–माता के ग्रामवासिनी स्वरूप के अनुसार पंचायतों को ग्रामीण सामाजिक और आर्थिक विकास

की स्वायत्त संस्थाओं के रूप में सुदृढ़ किये जाने की बात को निरन्तर जोर देकर कहा। उनकी यह अपेक्षा संविधान के दिशा–निदेशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 में परिलक्षित हुई। जिसमें ग्राम पंचायतों के गठन तथा उन्हें अधिकार सम्पन्न बनाकर स्वशासन की समर्थ इकाई बनाये जाने के उद्देश्य का उल्लेख है। दुर्भाग्य से इस पर पूरी निष्ठा से अमल नहीं हो पाया और समुचित उपायों तथा प्रोत्साहन के अभाव में पंचायतें स्वायत्तशासी संस्थाओं के रूप में उभर नहीं पाईं। पंचायतों में भी नगरपालिकाओं की तरह नियमित चुनाव न होना, इन संस्थाओं में समाज के सभी वर्गों और विशेष तौर पर महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित न किया जाना एवं उनके अपेक्षित कर्त्तव्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक अधिकारों का प्रत्यायोजन न किया जाना और इन्हें पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध न कराया जाना, ये कारक विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

दिसम्बर 1993 में मध्यप्रदेश पंचायत राज अधिनियम एवं नगरपालिका अधिनियम में व्यापक संशोधनों द्वारा संसद में पारित 73वें एवं 74वें संविधान संशोधनों को क्रियान्वयन हेतु मूर्त रूप दिया गया। नई संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप त्रिस्तरीय पंचायतों तथा नगरपालिकाओं के चुनाव कराने में मध्यप्रदेश अग्रणी रहा है। फरवरी 1994 में राज्य निर्वाचन आयोग के गठन के बाद राज्य में 30922 पंचायतों, 459 जनपद पंचायतों तथा 45 जिला पंचायतों के लिए चुनाव कराये गये। लगभग 60 प्रतिशत स्थानों पर निर्विरोध निर्वाचन के बावजूद इन चुनावों में 4,88,000 से अधिक उम्मीदवार मैदान में थे। चुनाव, छुटपुट घटनाओं को छोड़कर, आमतौर पर शांतिपूर्ण ढंग से सम्पन्न हुए।

पंचायत चुनावों के बाद राज्य में 365 नगरपालिकाओं के चुनाव नवंबर 1994 में कराये गये। यह उल्लेखनीय है कि अधिकांश नगरपालिकाएं वर्षों से अधिक्रमित थी। इनमें 6799 पार्षद चुने गये।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता होती है कि 1994 के पहले आम निर्वाचनों के बाद मध्य प्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग, राज्य में त्रिस्तरीय पंचायतों एवं नगरपालिकाओं के चार वृहद् निर्वाचन आयोजित करा चुका है। साथ ही आयोग दीर्घ चक्र से बाहर, प्रति वर्ष अपनी पांच–साला अवधि पूरा करने वाली निकायों के आम चुनाव एवं उप चुनावों के लघुचक्र भी आयोजित करता है। आयोग की दृष्टि राज्य और समूचे देश के बदलते कानूनी और राजनैतिक परिदृश्य पर बनी रहती है। मुझे बताया गया है कि निर्वाचन नियोजन के अनुभवों पर आयोग विश्लेषण करता रहता है और निर्वाचन संचालन नियमों एवं विनियमों में वांछित संशोधनों के लिये आयोग राज्य सरकार को अपने सुझाव भेजता रहता है। इनमें से बहुत सी अनुशंसाओं को विधान सभा द्वारा अधिनियमों में संशोधन

कर मान्यता दी गई है। पिछले तीन वर्षों में आयोग ने अपने कार्य में तकनीकी एवं प्रबंधन के नवीनतम उपायों को अपनाने की जो प्रतिबद्धता दर्शायी है, वह वाकई काबिले–तारीफ है। अभी इस सत्र के प्रारंभ से पूर्व मैंने जिस शिला–पट्टिका का अनावरण किया है, उससे यह स्पष्ट है कि आयोग ने मध्य प्रदेश में निर्वाचनों को राष्ट्रीय स्तर के उच्चतम मानकों के बराबर ला खड़ा किया है।

मुझे इस बात पर विशेष प्रसन्नता है कि आयोग ने मल्टी–पोस्ट निर्वाचनों में ई.व्ही.एम. द्वारा देश का अब तक के सबसे बड़े निर्वाचन कराया हैं। आई.टी. का अधिकाधिक उपयोग एवं नये उपायों से निर्वाचन के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष खर्चों में कमी भी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। मुझे विश्वास है कि आयोग देश में इस तरह की अपनी अग्रणी पहचान को बनाये रखने में आगे भी सफल रहेगा।

निष्पक्ष निर्वाचन के लिए बहुत जरूरी है कि डरा–धमकाकर, लोभ एवं साम्प्रदायिक उन्माद के जरिए मतदाताओं पर अनुचित दबाव न डाला जा सके। यह एक कठिन कार्य है।

चुनाव के दौरान जिस व्यवस्था का जिक्र सबसे ज्यादा होता है, वह है मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट यानि आदर्श आचरण संहिता। इसे राजनीतिक दलों और आयोग की आपसी सहमति से ही बनाया गया है। संहिता की मूल अवधारणा ही यह है कि सभी अभ्यर्थियों को, चाहे वे किसी भी राजनीतिक दल से संबंद्ध हों अथवा निर्दलीय हों, बिना किसी भेदभाव या पक्षपात के अपनी बात मतदाताओं के समक्ष रखने का अवसर मिले। सत्तारूढ़ एवं विपक्षी दलों से यह भी अपेक्षा है कि वे वोटर को मनलुभावन घोषणाओं से भ्रमित न करें, जिनका निर्वाह बाद में वे न कर पायें। सत्तारूढ़ दलों से, वे चाहे किसी भी संस्था में सत्तारूढ़ क्यों न हों, की जिम्मेवारी बनती है कि वे निर्वाचनों में लेवल– प्लेयिंग फील्ड बनाये रखें। निर्वाचन प्रक्रिया से जुड़े हुए सभी पक्षों के लिए यह आवश्यक है कि वे संहिता का सम्मान करें एवं उसका अक्षरशः पालन सुनिश्चित करें। तभी स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव की अवधारणा अक्षुण्ण रहेगी। आदर्श आचरण संहिता के पालन के साथ–साथ यह भी जरूरी है कि कानून–व्यवस्था के लिए जिम्मेदार प्रशासनतंत्र का सकारात्मक सहयोग लिया जाय, समाजसेवियों, बुद्धिजीवियों तथा लोकतंत्र के चौथे स्तंभ अर्थात् मिडिया का सहयोग भी लिया जाये।

मैं आज इस मंच के माध्यम से आप सभी का आव्हान करता हूं कि हम सब मिलकर ऐसे प्रयास करें, जिससे संहिता सिर्फ किताब में लिखी इबारत ही ना हो बल्कि निर्वाचन के दौरान सभी के आचार–विचार एवं व्यवहार में शामिल हो तथा वह मतदाताओं को दिखलाई भी देवे।

अन्त में मैं कहूँगा कि हमारे राज्य निर्वाचन आयोग पर सिर्फ मतदान कराने का दायित्व नहीं है। आपके कार्य का सीधा प्रभाव लोकमत को सफाई और सच्चाई से उजागर करना है। इसमें आनेवाली किसी भी अड़चन को वैधानिक तरीकों से दूर करना आपका दायित्व है।

निःसंदेह आप लोग लोकहित का यह कार्य प्रतिबद्धता भाव से करते रहे हैं और विश्वास है करते रहेंगे। इन्हीं शब्दों के साथ मैं आपके दो दिवसीय सम्मेलन का उद्घाटन करता हूं और यह विश्वास करता हूं कि लोकतंत्र को गांव–गांव तथा गली–गली तक पहुंचाने के अनुष्ठान में लगे आप लोगों का यह सम्मेलन अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल सिद्ध होगा।